जननी जन्मभूमिश्च

लेखक

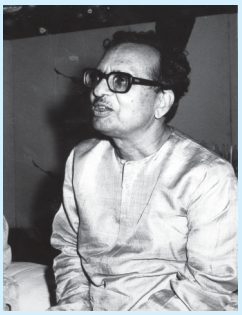

विद्यानिवास मिश्र

विद्यानिवास मिश्र जी का जन्म गोरखपुर जिले के पकड़डीहा ग्राम में सन् 1926 में हुआ था। आपकी प्रारंभिक शिक्षा मूलत: गाँव में ही हुई। उच्च शिक्षा के लिए इलाहाबाद गए, जहाँ से संस्कृत में एम.ए.किया। तत्पश्चात् गोरखपुर विश्वविद्यालय में शोधकार्य किया और पी-एच.डी. की उपाधि प्राप्त की। आपने कुछ समय के लिए उत्तरप्रदेश और विंध्यप्रदेश के सूचना विभागों में काम किया। बाद में अध्यापन कार्य करने लगे।

आप के.एम. मुंशी हिंदी तथा भाषा विज्ञान विद्यापीठ, आगरा में निदेशक, काशी विद्यापीठ और संपूर्णानंद संस्कृत विश्वविद्यालय के कुलपति रहे। अमेरिका के बर्कले विश्वविद्यालय में भी अध्यापन कार्य किया।

आपकी रचनाएँ इस प्रकार हैं –

(1) निबंध संग्रह – चितवन की छाँह, कदम की फूली डाल, तुम चंदन हम पानी, तमाल के झरोखे से, 'हल्दी, दूब और अक्षत', हिंदी की शब्द संपदा, मैंने सिल पहुँचाई आदि।

(2) संपादन कार्य – विंध्य-भूमि, पत्रिका तथा कुछ अन्य कृतियाँ।

केंद्रीय भाव:- प्रस्तुत निबंध में लेखक ने विभिन्न संस्मरणों, ऐतिहासिक प्रसंगों तथा स्वानुभूति के आधार पर जननी (माता) और जन्मभूमि का महत्व प्रतिपादित किया है। हम स्वेच्छापूर्वक या अनिच्छापूर्वक किसी देश की नागरिकता ग्रहण कर सकते हैं, पर माँ और जन्म-भूमि का स्वेच्छा-वरण नहीं किया जा सकता है। इनका कोई विकल्प नहीं है। लेखक ने जहाँ पारंपरिक लोकगीत के द्वारा माँ के दूध को प्रतिष्ठित किया है, वहीं पौराणिक उद्धरणों के माध्यम से जन्मभूमि की महिमा का गान किया है। लेखक ने उन प्रवासी भारतीयों की भावना को भी शब्द दिए हैं जो अपनी मातृभूमि की गोद में जीवन व्यतीत करना चाहते हैं। यहाँ तक कि पुष्प भी अपनी मूक वाणी से यह कामना करता है कि उसे उस पथ पर डाल दिया जाए जिस पर मातृभूमि पर बलिदान होने वाले वीरों के पग पड़े हों। निबंधकार अपने प्रस्तुतिकरण में जन्मभूमि को स्वर्ग से भी श्रेष्ठ निरूपित करने में सफल रहा है। लेखक के अनुसार मानवीय मूल्यों के रूप में स्थापित जन्मभूमि-प्रेम, राष्ट्रीय-भावना या देश-प्रेम को क्षति नहीं पहुँचाता बल्कि उसे और अधिक सुदृढ़ करता है, इससे व्यक्ति दूसरों की भावनाओं का आदर करना सीखता है।

मैं अपनी पहली यात्रा से स्वदेश लौट रहा था, लगभग डेढ़ वर्ष के प्रवास के बाद। यूरोप में कुछ दिन बिताए, पर घर पहुँचने की उत्कंठा बड़ी तीव्र थी, कार्यक्रम थोड़ा काटा और तेहरान से वायुयान चला तो बस दिल्ली की बेसब्री से प्रतीक्षा करने लगा। फिर यकायक घोषणा हुई कि मौसम बहुत खराब है, वायुयान कराची उतारा जा रहा है। बड़ी कोफ़्त हुई। ख़ैर, करांची उतरा तो वहाँ एक तनाव की सी स्थिति थी। पुर्तगाली गोवा से भाग रहे थे। बड़ी संख्या में करांची में उनका दल वायुयानों की प्रतीक्षा में हवाई अड्डे पर पसरा हुआ था। हिंदुस्तानी नागरिकों को अलग घेरे में डाल दिया गया। बाहर जा नहीं सकते थे। वहाँ स्नान की भी व्यवस्था बड़ी वैसी थी। इतने में एक व्यक्ति आया और भोजपुरी में बोला – पंडित जी, आपका घर बनारस के आस-पास तो नहीं है? मेरा भी वतन वही है और तब बातचीत शुरू हो गई और तब कानून की कैद नहीं रही, मेरा हमवतन मुझे करांची की सैर करा लाया, बेहद खातिर और दूसरी उड़ान की सारी

(3) कविता संग्रह – पानी की पुकार ।

मिश्र जी की भाषा परिमार्जित है। उसमें संस्कृत की सी समास–बहुलता नहीं है। प्रचलित संस्कृत, उर्दू और अंग्रेजी के शब्दों का प्रयोग करके उन्होंने भाषा को सहज प्रवाह दिया है। देशज शब्दों का प्रयोग भी यत्र–तत्र मिल जाता है, किंतु इस प्रकार के प्रयोगों से कहीं भी शिथिलता या अस्पष्टता नहीं आने पाई है।

मिश्र जी के निबंधों में शैलियों के विभिन्न रूप मिलते हैं। आपके निबंधों में विश्लेषणात्मक, भावात्मक, विचारात्मक, व्याख्यात्मक, समीक्षात्मक आदि शैलियों को देखा जा सकता है।

उनकी भाषा–शैली विविधतापूर्ण है, इसमें एक ओर तो संस्कृत बहुल शब्दावली की छटा है तो दूसरी ओर लोकभाषा की सरलता और ताजगी देखने को मिलती है। मिश्र जी के निबंध लालित्य पूर्ण है।

श्रेष्ठ निबंधकार, भाषाविद् और अध्यापक के रूप में मिश्रजी की हिंदी जगत् में अपनी विशिष्ट पहचान रही है।

व्यवस्था कर दी। विदा लेने लगा तो उसकी आँखें नम थीं, बोला – मुल्क बदल जाए तो बदल जाए पर वतन तो वतन होता है, गंगा और गंगा के कछार से मेरा सलाम कहें। तब मुझे याद आया कि लंका के आतिथ्य सत्कार को अस्वीकार करते हुए भगवान् रामचन्द्र ने कहा था –

''अपि स्वर्णमयी लंका न मे लक्ष्मण रोचते।
जननी जन्मभूमिश्च स्वर्गादपि गरीयसी।।''

लक्ष्मण, लंका सोने की ही क्यों न हो, मुझे नहीं रूचती। जननी और जन्मभूमि स्वर्ग से अधिक गौरवशाली होती है। राम की उक्ति की सार्थकता यकायक मेरे हम–वतन पाकिस्तानी की आँखों से झलमला गई। मनुष्य जब कभी अपने बावजूद कहीं बेकाबू हो जाता है, वहीं उसकी मनुष्यता उभर कर ऊपर आ जाती है। राष्ट्रीयता के दायित्व का वरण एक चरम मानवीय मूल्य के आगे कुछ छोटा पड़ जाता है। इससे राष्ट्रीय भावना की क्षति नहीं होती, वह भावना भी और संस्कृत होती है, क्योंकि तभी व्यक्ति दूसरे की भावना को आदर देना सीखता है, देश–भक्ति का सही अर्थ पाता है। देशभक्ति मानवीय मूल्यों की क़ीमत पर पाना, पाना नहीं। देश का वरण न जाने किन–किन दबावों और ज़रूरतों से आदमी करता है पर माँ का कोई वरण नहीं करता, न कोई जन्मभूमि का वरण करा है। वह माँ का बस बेटा होता है, जन्मभूमि का, माटी का बस हो जाता है। जो मनुष्य इस अपने आप बरसे प्यार को भूल जाएगा, वह किसी निष्ठा के योग्य नहीं रहेगा। जिसको माँ से प्यार होगा, वतन से प्यार होगा, वही दूसरे मनुष्य को, दूसरे के वतन को प्यार दे सकेगा, उसके प्यार को आदर दे सकेगा, कानूनी आदर भाव नहीं, भीतर से आदर दे सकेगा।

माँ जब देती है, वतन जब देता है, तो हमें उस समय कहाँ सुधि रहती है कि हम कुछ पा रहे हैं, उस समय तो हमारा धीरे–धीरे पलना, बढ़ना और इनके प्यार का बरसना – एक साथ घटित होते रहते हैं, मानो उनका देना ही हमारा आकार बन रहा हो। माता और जन्मभूमि के स्नेह के पिंड के सिवा हम हैं क्या? उसी दिन दिल्ली उतरने के पहले मुझे याद आया, विवाह के पूर्व का एक लोकाचार। हमारे क्षेत्र में वर जब विवाह करने चलता है तो अपने घर से निकलता है, गाँव के देवी–देवताओं की परिक्रमा करता है, अंत में माँ से विदा लेता है और उससे कहा जाता है कि माँ का एक बार दूध पियो। दूध पीने की केवल रस्म अदा की जाती है और एक गीत गाया जाता है:

'जात है पूता तू त गौरी बियाहन गौरी बियाहन
दुधवा के मोल दइ जाऊ।
गइया के दुधवा त हटिया बिकाला त बटिया बिकाला

माई के दूध अनमोल।'

'पुत्र, तुम गौरी-सी सुलक्षण कन्या ब्याहने जा रहे हो, दूध का मोल चुकाते जाओ। गाय का दूध हाट में बिकता है, बाट में बिकता है, माँ के दूध का कोई मूल्य चुकता नहीं कर सकता है। जन्म-जन्मांतर में भी कोई इसका ऋण नहीं भर सकता है।' मैंने इस गीत की गूंज मन में सुनी और मेरी आँखें छलछला उठीं।

दिल्ली की ज़मीन पर उतरा, मैंने अपनी जन्मभूमि को प्रणाम किया। कौन स्वर्ग मुझे इतना प्यार देता, जितना इस भूमि ने दिया है! अमरीका में ही था तो एक दिन एक हमवतन घर आ टपके और उसी समय एक अमेरिकी नीग्रो कवि भी। दोनों ने चाय पी। बहस शुरू हुई, भारत में जन्मे और अमरीका के अन्न से दसेक वर्षों तक पले भारत के सपूत बोले: हिंदुस्तान में नहीं लौटूँगा, एक घोर-नरक है, साँप-बिच्छू, गर्द-ग़ुबार का देश है। वहाँ का आदमी एकदम जाहिल है, बेईमान है। न वहाँ भौतिक सुख-सुविधा है, न कोई आध्यात्मिक गहराई ही और अमरीका स्वर्ग है, कम-से-कम चार सौ वर्षों तक पृथ्वी पर यही एकमात्र देश है, जो स्वर्ग बना रहेगा। मेरा नीग्रो कवि मित्र बिफर पड़ा, सिर्फ चार-सौ वर्ष, इस स्वर्ग ने बड़ी कम उम्र पाई और यह बतलाओ कि यह कचरा-फेंक उपभोक्ता सभ्यता का देश, यह आदमी और आदमी के बीच अदृश्य झिल्ली की दीवार बनाने वाली संस्कृति का देश, यह 'ख़रीदो-ख़रीदो' के पागलपन वाला देश अगर स्वर्ग है तो फिर नरक कहाँ है? किसी तरह मैंने दोनों का बीच-बचाव किया, पर स्वयं भीतर उद्वेलित हो गया। स्वर्ग तलाशने की यह लाचारी क्यों आती है और अपने दिए गए स्वर्ग से विरक्ति क्यों नही होती है? यह पहेली बड़ी अनबूझ पहेली है। मन देश के लिए, देश की छोटी-छोटी चीज़ों के लिए तरसता रहता है, तब भी स्वर्ग को नहीं छोड़ पाता, स्वर्ग के प्राणी उसे दुतकारते हैं, अपमानित करते हैं, विडम्बना यह है कि स्वर्ग में द्वितीय श्रेणी के नागरिक का अधिकार पाने के लिए व्यक्ति अपने देश की सरकार से अपेक्षा रखता है। क्योंकि वह समझता है, मैं देश को विदेशी मुद्रा देता हूँ। वह यह भूल जाता है कि मातृभूमि और स्वर्ग में अंतर है, मातृभूमि तो आपकी लात भी सहती है, स्वर्ग नहीं सहता। भगवान् रामचन्द्र जी ने और भगवान् श्रीकृष्ण ने स्वर्ग की उपेक्षा झूठे ही नहीं की। मेरे मन में विचार बहने लगे। मनुष्य हाड़माँस ही नहीं है, वह कुछ और भी है, वह हवा, पानी, मिट्टी का स्पर्श भी है, एक ऐसा रंग भी है, जो उसे सूरज से मिलता है, जिसे बचपन के आकाश में उगते, उठते और ढलते उसने देखा है, जो उस अलाव की आग से आता है, जिसके आस-पास बैठे-बैठे कहानियाँ सुनी हैं, सोने वाले लड़के को गुदगुदाकर जगाया, हँसमुख साथी को चिकोटी काटी और एक ऐसी गूँज से आता है, जो निबिड़ एकान्त में, घोर असहायता और निरूपायता में, भयंकर बेगानेपन के बीच एक उत्सुकता बनकर जागी है तो एकान्त भर गया है असहायता और निरूपायता का कही पता नहीं रहा, बेगाने अपने हो गए हैं और ऐसे आदमी के लिए बहिश्त की कोई हकीकत नहीं रह जाती, स्वर्ग की कोई कामना नहीं रह जाती। तब एक कामना रह जाती है :

मुझे तोड़ लेना वन माली उस पथ पर तुम देना फेंक,
मातृभूमि पर शीश चढ़ाने जिस पथ जाते वीर अनेक।

यह कामना आज बड़ी रूमानी कामना लगती है, क्योंकि स्वर्ग कुछ अधिक लुभावना हो गया है। स्वर्ग इसलिए लुभावना हो गया है कि दूसरे के सुख और दूसरे के दुख की चिंता कम हो गई है, अपना सुख कुछ भारी पड़ने लगा है।

पर नहीं, मैंने दूसरी तरह के प्रवासी भारतीय देखे हैं, जो साफ कहते हैं कि हम इस नरक में सिर्फ़ इसलिए रह रहे हैं कि हमारे बच्चे अच्छी शिक्षा पा सकें, उन्हें ऐसे नरक की विवशता न सताये।

ये भारतीय बहुत धनी होने नहीं जाते, बहुत ग़रीब न रहें, इसलिए जाते हैं और तथाकथित स्वर्ग में अपनी जन्मभूमि से जुड़े रहते हैं। वे जन्मभूमि पर दावा भी नहीं करते, पर गर्व ज़रूर रखते हैं। बैंकाक, सिंगापुर, वियतनाम, क्वालालम्पूर, जकार्ता–इन तमाम शहरों में मुझे ऐसे भारतीय मिले, बड़ी आत्मीयता से मिले, अपनी पूरी व्यावसायिकता छोड़कर मिले। इनके साथ मैं गाँवों में गया तो देखा कि गाँव के लोग इतने प्यार से अपनी भाषा में इनसे बात कर रहे हैं, शिकायत कर रहे हैं कि आप तो भूल गए, इधर आते ही नहीं, मैं दंग हो गया। मेरे एक मार्गदर्शक अंग्रेजी नहीं जानते थे, परिमार्जित हिन्दी भी नहीं जानते थे, पर भोजपुरी और थाई दोनों भाषाओं में समान अधिकार रखते थे। उन्हें थाई लोगों से प्यार था, पर जब उनसे मैंने पूछा कि बुढ़ापा कहाँ काटना चाहेंगे तो बोले, अपनी भुइँया–अपनी भूमि में। मरते समय अपने आँगन की तुलसी के दो दल और गंगाजल की एक बूँद मिल जाएगी। और मैंने पाया कि इस आदमी की दुविधा एक मानवीय दुविधा है, वह अपनी निजता का प्रतिबिम्ब तो पाना चाहता है, पाकर तृप्त भी होता है, पर अपनी निजता को खोना नहीं चाहता, कंठगत प्राण की तरह उसे बचाए रखना चाहता है। शायद अपनी जड़ से इतना लगाव न होता तो इतना प्यार अनायास दूसरे से पाने का उसे सौभाग्य प्राप्त नहीं होता।

मैं कुछ बहक गया, बात चली थी स्वर्ग से मातृभूमि की तुलना की। स्वर्ग से मातृभूमि इसलिए ही शायद बड़ी है कि स्वर्ग का भोग करने वाला अपने को ऊँचा समझने लगता है, मातृभूमि से प्यार करने वाला विनम्र बना रहता है, यह समझने के लिए कि जैसे अपनी भूमि के लिए तड़पता है, वैसे ही दूसरा भी तो तड़पता होगा। बड़प्पन कहीं रहने या कहीं न रहने से नहीं आता है, आता है दूसरे को बड़प्पन देने से, दूसरे के दुख को अपना दुख मानने से। अपभ्रंश का एक पुराना दोहा है, जिसका भावार्थ है, 'यदि तुम पूछते हो बड़ा घर कौन है, तो देखो वह छोटी–सी टूटी–फूटी झोपड़ी, उसमें सबके प्यारे बंधु रहते हैं, जो कोई भी कष्ट में हो, उसके कष्ट का निवारण करने के लिए, उसकी तरफ़ से जूझने के लिए तत्पर रहते हैं, वह झोपड़ी इस देश का सबसे बड़ा घर है :

जो पुच्छइ बड्डाइँ घर सो बड्डा घर ओइ।
विब्भलजनअब्भुद्धरणकन्त कुडीरइ जोइ।।

मेरे देश के सबसे बड़े घर हैं श्रीराम के चित्रकूट की कुटिया, राधा की वह गौशाला जिसमें श्रीकृष्ण उनकी गाय दुहने जाते थे, बुद्ध की वह आम की बगीची का डेरा जिसे उन्होंने वैशाली की नगरवधू अम्बपाली से भिक्षा में लिया था, महात्मा गांधी की साबरमती आश्रम में सीधी–सादी कुटिया, जो सही अर्थ में हृदय–कुंज है।

आज़ादी की लड़ाई में क़ैदखाना भी बड़ा घर हो गया था। ऐसे बड़प्पन का अहसास किस गहरी मानवीय ममता में आता है, उसकी फ़सल किसी स्वर्ग में तैयार नहीं हुई। ऐसी फ़सल का दाना चखने के लिए ईश्वर को बार–बार भूमि पर उतरना पड़ा है और उन्हें जन्मभूमि की ही ममता ने जन–जन का आराध्य बनाया है। श्रीकृष्ण को ब्रज नहीं बिसरता, राम को सरयू माँ की तरह पुकारने लगती है और विरक्त शंकराचार्य को मुमूर्ष माँ की पुकार पर पेरियार के तट पर आना पड़ता है।

मुझे तो स्वर्ग का कोई स्वाद मालूम नहीं, लेकिन मथके निकाले टटके नैनू (नवनीत) के साथ माँ के द्वारा परसी गई उस रोटी का स्वाद कुछ अलग होता है, इतना जानता हूँ और जानते रहना चाहता हूँ। इसीलिए जन्मभूमि के बाहर निकलने पर वापिस आते समय अपूर्व सुख मिलता है, उस सुख पर अमरीका वाले अपने भारतीय हमवतन के चार सौ साला स्वर्ग हज़ार बार न्यौछावर।

अभ्यास

अति लघु उत्तरीय प्रश्न

1. 'गंगा और गंगा के कछार को मेरा सलाम कहें' यह कथन लेखक से किसने कहा?
2. जननी और जन्मभूमि किससे अधिक श्रेष्ठ है?
3. आज़ादी की लड़ाई में 'बड़े घर' से आशय था –

   अ. महल ब. जेलखाना

   स. बहुत बड़ी हवेली द. विशाल मकान

लघु उत्तरीय प्रश्न

1. मातृभूमि और स्वर्ग में क्या अंतर है?
2. फूल की कामना क्या है?
3. गाय के दूध से माँ के दूध की तुलना क्यों नहीं की जा सकती?
4. लेखक ने अपने भारतीय हमवतन के चार सौ साला स्वर्ग को किस सुख पर हज़ार बार न्यौछावर किया है?

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

1. जन्मभूमि के प्रति प्रेम और राष्ट्र प्रेम में कोई अंतर्विरोध नहीं है। पाठ के आधार पर स्पष्ट कीजिए।
2. लेखक के नीग्रो कवि मित्र ने अमेरिका के संबंध में क्या विचार व्यक्त किए?
3. अपभ्रंश के पुराने दोहे में देश का सबसे बड़ा घर किसे कहा गया और क्यों?
4. सप्रसंग व्याख्या कीजिए :

   अ. देश का वरण.....बस हो जाता है।

   ब. वह अपनी निजता.....प्राप्त नहीं होता।
5. भाव पल्लवन कीजिए :

   अ. मुल्क बदल जाए वतन तो वतन होता है।

   ब. जननी जन्मभूमिश्च स्वर्गादपि गरीयसी।

भाषा अध्ययन–

1. **निम्नलिखित शब्दों के हिन्दी रूप लिखिए** –

   वतन, मुल्क, सलाम, जाहिल, हक़ीक़त, क़ैदखाना।
2. **निम्नलिखित वाक्यांश के लिए एक शब्द लिखिए** –

   क. राष्ट्र से संबंधित भाव

   ख. आध्यात्म से संबंधित

ग. व्यवसाय से संबंधित

घ. बूढ़ा होने की अवस्था

कर्त्ता-क्रिया की अन्विति संबंधी वाक्यगत अशुद्धियाँ –

कर्त्ता-क्रिया की अन्विति संबंधी अशुद्धियों को दूर करने के लिए निम्नलिखित नियमों पर ध्यान दीजिए :

1. यदि कर्त्ता की संज्ञा परसर्ग (कारक चिह्न) रहित है, तो क्रिया उसी के अनुसार बदलती है।

   जैसे - लड़कियाँ आम खाती हैं।

2. यदि कर्त्ता तथा कर्म दोनों परसर्ग सहित हैं तो क्रिया उन दोनों से संबंधित न होकर पुल्लिंग, एकवचन तथा अन्य पुरुष रूप में आती है।

   जैसे - लड़कों ने आमों को खाया।

3. कर्त्ता में यदि समान लिंग वाली विभिन्न संज्ञाएँ 'और' से जुड़ी हों तो क्रिया बहुवचन में आती है।

   जैसे - मोहन, सोहन और दीपक दिल्ली जा रहे हैं।

4. यदि कर्त्ता में संज्ञाएँ 'या' से जुड़ी हैं तो क्रिया अंतिम पद के अनुसार बदलती है।

   जैसे - मोहन, सोहन या सीता जाएगी।

5. कर्त्ता में सर्वनाम पदों का क्रम प्रायः इस प्रकार होता है –

   पहले मध्यम पुरुष फिर अन्य पुरुष तथा अंत में उत्तम पुरुष। ऐसे पदबंध में क्रिया अंतिम पद के अनुसार बदलती है।

   जैसे - आप, वे और हम लोग बाज़ार चलेंगे।

6. यदि विशेष्य के स्थान पर एक से अधिक संज्ञाएँ हैं तो विशेषण निकटवर्ती विशेष्य के अनुसार होता है ।

   जैसे – 1. छोटे-बड़े लड़के और लड़कियँ।

   2. छोटी-बड़ी लड़कियँ और लड़के ।

3. निम्नलिखित अशुद्ध वाक्यों को शुद्ध करके लिखिए :

अ. मोहन कुत्ते को डंडे से मारा।

आ. क्या आप खाना खा लिए हैं।

इ. दरवाज़े पर कौन आई है?

ई. मेरा बेटा और बेटी बाज़ार गई हैं।

उ. इतना मीठा चाय मैं नहीं पी सकती हूँ।

4. निम्नलिखित मुहावरों का वाक्यों में प्रयोग कीजिए :

पसरा होना, घेरे में डालना, आँखें छलछला आना, स्वर्ग बना रहना, लात सहना, भारी पड़ना

योग्यता विस्तार

1. जन्मभूमि को महिमामंडित करने वाली कहानी, कविता या लेख आदि का संकलन कीजिए।
2. 'माँ' और 'जन्मभूमि' से संबंधित लोकगीतों का संकलन कीजिए।
3. अपनी मातृभूमि के प्रति अपने कर्त्तव्यों की चर्चा कक्षा में कीजिए और लिखकर कक्षा में टाँगिए।

शब्दार्थ

अपि – भी, ***रोचते*** – भाती, ***स्वर्गादपि गरीयसी*** – स्वर्ग से भी बढ़कर, ***कोफ़्त*** – खीझ, ***मुल्क*** – देश ***वतन*** – मातृभूमि जन्मभूमि, ***लोकाचार*** – सामाजिक रीति-रिवाज, ***सुलक्षण कन्या*** – अच्छे गुणों वाली लड़की, ***नीग्रो*** – अश्वेत अमेरिकन नागरिक, ***विरक्ति*** – अलगाव, विराग, ***विडम्बना*** – विसंगति, ***अलाव*** – आग जलाने का वह स्थान जिसके चारों ओर लोग बैठकर आग तापते हैं। ***निरूपायता*** – कोई उपाय न होना, ***बहिश्त*** – स्वर्ग, ***रूमानी*** – रसिक, रस से युक्त, ***प्रवासी भारतीय*** – अन्य देशों में रहने वाले भारतीय, ***परिमार्जित*** – परिष्कृत, ***कंठगत प्राण*** – गले तक आ चुके प्राण, प्राण निकलने की स्थिति, ***अपभ्रंश*** – एक भाषा, ***मुमूर्ष*** – मरणासन्न, मरण का इच्छुक, ***नवनीत*** – मक्खन, ***पेरियार*** – केरल प्रांत का एक क्षेत्र ।

* * *